

## पाहुडदोहा का मंगलाचरण

-प्रो. वीरसागर जैन

गुरु दिणयरु गुरु हिमकिरणु, गुरु दीवउ गुरु देउ ।  
अप्पहँ परहँ परंपरहँ, जो दरिसावइ भेउ ॥  
बलिहारी गुरु अप्पणइँ, दिउ हाँडी सय वार ।  
माणस हुंतउ देउ किउ, करत ण लगगइ वार ॥

उक्त दो दोहे 'पाहुडदोहा' ग्रन्थ के मंगलाचरणरूप हैं | इनका हिन्दी-सरलार्थ इस प्रकार है-

“गुरु सूर्य हैं, गुरु चन्द्र हैं, गुरु दीपक हैं, गुरु देव हैं; क्योंकि वे स्व और पर के भेद को अत्यंत स्पष्टता से दिखाते हैं | मैं अपने गुरु की सौ बार बलिहारी जाता हूँ, क्योंकि उन्होंने मुझे शीघ्र ही मनुष्य से देव बना दिया |”

'पाहुडदोहा' अपभ्रंश भाषा का एक अद्भुत ग्रन्थ है, जिसकी रचना मुनि रामसिंह या योगीन्दुदेव या किसी अन्य अज्ञात सन्त ने की है | यद्यपि इस ग्रन्थ के रचनाकार, रचनाकाल आदि किसी के भी विषय में हमें कोई भी प्रामाणिक जानकारी नहीं मिलती, परन्तु इतना निश्चित है कि यह ग्रन्थ कम से कम एक हजार वर्ष पहले लिखा गया है और तब से लेकर आज तक अत्यधिक लोकप्रिय रहा है | इसने परवर्ती समग्र साहित्य को आश्चर्यजनक रूप से प्रभावित किया है | हिन्दी का निर्गुण सन्त-साहित्य तो इसकी प्रतिछाया ही प्रतीत होता है परन्तु अन्य भी अनेक बड़े-बड़े प्राचीन आचार्यों ने अपने ग्रन्थों में इसके दोहे उद्धृत किये हैं, जिनमें अमृतचन्द्र, हेमचन्द्र, श्रुतसागर आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं |

बहरहाल, अभी इस ग्रन्थ का विशेष परिचय न देते हुए केवल इसके उपर्युक्त मंगलाचरणरूप दोहों में निहित भावों के उद्घाटन का संक्षिप्त प्रयास करते हैं |

इस मंगलाचरण की सबसे पहली विशेषता तो यह है कि मंगलाचरण में प्रायः सर्वत्र इष्ट देव अर्थात् भगवान को नमस्कार करने की परम्परा पाई जाती है, परन्तु यहाँ देव के स्थान पर गुरु को नमस्कार किया गया है, जो अनेक दृष्टियों से बहुत ही महत्त्वपूर्ण बात है | परवर्ती काल में इस बात को बहुत अधिक मान्यता प्राप्त हुई और अनेक सन्तों ने गुरु पर अनेकानेक दोहे, पद, अध्याय तक लिखे | उन्होंने अनेक प्रकार से इस बात को न्यायोचित भी सिद्ध किया कि गुरु का महत्त्व भगवान से भी अधिक है | इस सम्बन्ध में कबीर का निम्नलिखित दोहा तो सर्वजनसुप्रसिद्ध है ही-

‘गुरु गोविन्द दोऊ खड़े, काके लागू पाय |  
बलिहारी गुरु आपकी, गोविन्द दियो बताय ॥’

अन्य भी अनेक दोहे या पद इसी प्रकार के बहुत मिलते हैं | एक दोहा यह भी उल्लेखनीय है-

अति अगाध अति ऊथरो, नदी कूप सर वाय |

सो ताको सागर जहाँ, जाकी प्यास बुझाय ॥

इसी प्रकार एक दोहा श्रीमद् राजचंद्र ने भी 'आत्मसिद्धि' में लिखा है-

प्रत्यक्ष सद्गुरु सम नहीं, परोक्ष जिन उपकार ।

एवो लक्ष्य थया बिना, उगे न आत्म विचार ॥

इसी प्रकार के और भी अनेकानेक दोहे यहाँ उद्धृत किये जा सकते हैं, परन्तु सबका तात्पर्य यह है कि साधना के मार्ग में गुरु का स्थान भगवान से भी अधिक है । गुरु का महत्त्व इसलिए भगवान से अधिक है, क्योंकि भगवान की भी पहिचान हमको गुरु ही कराते हैं । विचार करो, गुरु के बिना हम भगवान को कैसे जानते ?

इस प्रकार इस मंगलाचरण का यह दोहा गुरु के विशेष महत्त्व को गहराई से रेखांकित कर रहा है । इससे हमें भी जीवन में गम्भीरतापूर्वक गुरु का विशेष महत्त्व समझना चाहिए । हमसे प्रायः यह भूल हो जाती है कि हम भगवान की महिमा से तो भरे रहते हैं, पर गुरु का वैसा महत्त्व नहीं समझ पाते हैं । यदि हम अपने जीवन में गुरु को महत्त्व देना सीख लें तो हमारा कल्याण होते देर न लगे । लोग भगवान की तो रात-दिन पूजा करते रहते हैं, उनके लिए करोड़ों रुपये के मन्दिर आदि बनवाते हैं, उनमें सोना जड़वाते हैं, रोज पूजा-प्रक्षाल आदि करते हैं, हजारों रुपये की सामग्री चढ़ाते हैं, पर जिनसे हम पढ़ते हैं, जो हमारे सामने हैं, अपना अमूल्य समय हमें देते हैं, उन गुरु पर बिल्कुल ध्यान नहीं देते, उनको प्रसन्न नहीं करते । कैसे ज्ञान प्राप्त हो ? जबकि यहाँ उक्त दोहों में तो निरन्तर दिन में सैकड़ों बार गुरु पर बलिहारी होने की बात कही गई है । अतः इस विषय पर हमें बहुत अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है । यदि गुरु का महत्त्व पहिचान कर उनकी सेवा की जाए, उन पर समर्पित हुआ जाए तो शीघ्र अपूर्व लाभ प्राप्त हो सकता है ।

परन्तु अब यहाँ यह भी गम्भीरतापूर्वक विचारणीय है कि आखिर पूरी परम्परा ने देव को ही क्यों अधिक महत्त्व दिया है, गुरु को क्यों इतना अधिक महत्त्व नहीं दिया है ? मंगलाचरण में प्रायः सर्वत्र इष्ट देव अर्थात् भगवान को ही नमस्कार करने की परम्परा क्यों पाई जाती है ?

उत्तर- यद्यपि गुरु का साधना में बहुत बड़ा योगदान होता है और इस अपेक्षा से उनको देव से भी अधिक बड़ा बता दिया जाता है, परन्तु वास्तव में ऐसा नहीं है, बड़े तो देव ही हैं, क्योंकि वे वीतराग-सर्वज्ञ होते हैं, गुरु तो अल्पज्ञ और सराग होते हैं । हमारा आदर्श वीतराग-सर्वज्ञ ही हैं, अल्पज्ञ और सराग नहीं । अल्पज्ञ और सराग को आवश्यकता से अधिक महत्त्व देने पर हमारा आदर्श बिगड़ जाता है और अन्य भी अनेक विकृतियाँ उत्पन्न हो जाती हैं, जैसा कि आजकल अनेक स्थानों पर देखा जा रहा है । वहाँ गुरु को देव से भी अधिक महत्त्व प्रदान करने की बात बहुत अधिक अतिरेक को प्राप्त हो गई है । लोग सचमुच ही गुरु को भगवान से बढ़कर समझ रहे हैं । इससे वहाँ व्यक्तिवाद, पंथवाद और अंधभक्ति बढ़ रही है ।

अतः इस विषय को अत्यन्त सावधानी से स्याद्वाद का कुतुबनुमा हाथ में रखकर ही समझना चाहिए । दोनों बातें महत्त्वपूर्ण हैं ।

तथा यहाँ हम ऐसा भी समझ सकते हैं कि इस मंगलाचरण में यद्यपि गुरु को नमस्कार किया गया है, परन्तु 'गुरु' में देव भी गर्भित हैं, क्योंकि वे भी शास्त्रों में एक अपेक्षा से गुरु ही कहे गये हैं- 'जय जय नाथ परमगुरु हो' इत्यादि। तथा उनकी वाणी के रूप में शास्त्र भी गर्भित हैं।

किन्तु ध्यान रहे यदि कोई वक्ता इस मंगलाचरण में देव और शास्त्र को गर्भित न करे और मात्र गुरु को ही कहे तो भी कोई दोष नहीं है, उसकी बात का अपना अलग ही सौन्दर्य है, अलग ही वैशिष्ट्य है। इस मंगलाचरण का मूल भाव वास्तव में यही है। यह तो मात्र छल-ग्रहण से बचाने आदि के लिए हमने विविध प्रकार की व्याख्या की है।

इस मंगलाचरण की दूसरी विशेषता यह है कि इसमें गुरु को केवल नमस्कार ही नहीं किया गया है, अपितु उनका स्वरूप भी समझा दिया गया है। स्पष्ट कहा गया है कि जो स्व-पर-भेदविज्ञान कराये वही सच्चा गुरु है- 'अप्पहँ परहँ परंपरहँ, जो दरिसावइ भेउ'। यह बहुत ही महत्त्वपूर्ण बात है। गुरु का मुख्य स्वरूप यही है, अन्य कोई स्वरूप नहीं है। इस पर भी हम सबको गम्भीरतापूर्वक ध्यान देना चाहिए।

गुरु को स्वरूप को स्पष्ट करने के लिए ही यहाँ गुरु को चार-चार उपमाएँ भी दी गई हैं, जो बहुत ही अर्थपूर्ण हैं। हमें उन पर गम्भीरता से विचार करना चाहिए। मुझे उनका अभिप्राय ऐसा प्रतीत होता है कि- गुरु अन्धकार को दूर करते हैं अतः सूर्य हैं, ताप को दूर करते हैं अतः चन्द्र हैं, संकट में भी मार्गदर्शन करते हैं अतः दीपक हैं, दिव्यता प्रदान करते हैं अतः देव हैं। अथवा- ऐसा भी समझ सकते हैं कि सूर्य प्रकाशमान तो है, पर गर्म है, अतः चन्द्र कहा। चन्द्र शीतल तो है, पर दूर है, अतः दीपक कहा। दीपक पास में तो है, पर अचेतन है, अतः देव कहा। इसी प्रकार अन्य भी अनेक भाव ग्रहण किये जा सकते हैं।

इस मंगलाचरण की तीसरी विशेषता यह है कि इसमें गुरु को प्रतिदिन सैंकड़ों बार सर्वस्व समर्पण के साथ प्रणाम करने की बात कही गई है। यह बहुत महत्त्वपूर्ण बात है। इससे शिष्य की ज्ञान के प्रति तीव्रतम रुचि व्यक्त होती है।

इस मंगलाचरण की चौथी विशेषता यह है कि इसमें मनुष्य से देव बनाने की जो बात आई है, वह भी बहुत महत्त्वपूर्ण है। 'मनुष्य' से ही 'देव' बना बनाया जा सकता है, अन्यथा नहीं। जिस व्यक्ति में अभी सामान्य मनुष्यता भी नहीं है, उसका कल्याण कैसे हो सकता है ?

इस मंगलाचरण की पांचवीं विशेषता यह है कि इसमें 'अपने गुरु' -ऐसा कहा गया है, जो बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। शिष्य को गुरु के प्रति बहुत अपनापन होना चाहिए, यद्यपि गुरु को शिष्य से विशेष अपनापन नहीं होता है। शास्त्रों में लिखा है कि शिष्य तो गुरु के लिए ऐसा कहते हैं कि ये मेरे गुरु हैं, पर गुरु ऐसा नहीं कह सकते कि यह मेरा शिष्य है।

इस प्रकार पाहुडोहा का यह मंगलाचरण मुझे बहुत ही महत्त्वपूर्ण प्रतीत होता है। यदि आप भी इस पर गम्भीरता से चिन्तन करेंगे तो इसमें आपको और भी अधिक भाव भासित होंगे। पाहुडोहा का यह मंगलाचरण बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। इसने परवर्ती साहित्य को बहुत अधिक प्रभावित किया है। इसका दूसरा दोहा तो कबीर-ग्रन्थावली में 'सतगुरु कौ अंग' में एकदम यथावत् ही मिलता है।

सद्गुरु की महिमा अनँत, अनँत किया उपगार |  
लोचन अनँत उघाडिया, अनँत दिखावनहार ॥